प्रभात
छिपाएंगे नहीं, छापेंगे
सुभारती
facebook-Subharti Tv   Twitter-Subharti Tv

ऐतिहासिक कुम्भ नगरी प्रयागराज तीर्थयात्रा का धार्मिक केन्द्र

लखनऊ। प्रभात

प्रयाग पुण्यफल की प्राप्ति के लिए प्राचीन समय से ही धार्मिक तीर्थयात्रा का केन्द्र बिन्दु रहा है। तीर्थयात्रा हिन्दुओं की एक प्राचीन और निरन्तर धार्मिक प्रक्रिया है। भारत के अनेक भागों में फैले हुए तीर्थ केन्द्र करोड़ों तीर्थयात्रियों को दूर-दूर से आकर्षित करते रहते हैं। इस धार्मिक प्रक्रिया के दौरान लोगों का संचार देश के एक कोने से दूसरे कोने में निरन्तर होता रहता है जिसके फलस्वरूप अनेक आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक प्रक्रियाएं स्वतः होती रहती हैं। भारत के तीर्थों में अनेक तीर्थ ऐसे हैं, जिनका वैश्विक महत्व है, प्रयाग उनमें से एक है।

प्रयाग गंगा, यमुना एवं अदृश्य सरस्वती के संगम बिन्दु पर गंगा मैदान के हृदय स्थल में विद्यमान है। यह एक ऐसा महत्त्वपूर्ण तीर्थ केन्द्र है जहाँ पर देश के हर भाग से नित्यप्रति यात्री आते रहते हैं। माघ महीने में यहाँ पर एक बड़ा मेला लगता है जहाँ पर लोग बड़ी संख्या में स्नान करने हेतु आते हैं। यहाँ पर आने वाले तीर्थ यात्रियों की संख्या देश के विभिन्न भागों के लोगों की होती आते हैं। यहाँ प्रत्येक बारहवें वर्ष कुम्भ मेला लगता है। प्रयाग की महत्ता का वर्णन वैदिक काल से लेकर रामायण, महाभारत, पुराण, बौद्ध एवं जैन साहित्य में वर्णित है। प्रयाग को ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति का केन्द्र माना जाता है।

आस्था

- प्रयाग को माना जाता है ब्रह्माण्ड उत्पत्ति का केन्द
- कहा जाता है भारत की हृदय-स्थली

प्रो.भरत राज सिंह
महानिदेशक
एसएमएस, लखनऊ

इस बात में कितनी सत्यता है, यह विवादास्पद है, किन्तु हमारे देश पर प्रयाग के सांस्कृतिक, राजनीतिक, सामाजिक प्रभाव का कोई विवाद नहीं है। इसी कारण प्रयाग को भारत का सांस्कृतिक हृदय-स्थल कहते हैं। धार्मिक तीर्थयात्रा एक ऐसी प्रक्रिया है जिससे सामाजिक-सांस्कृतिक समिश्र ऐक्य एवं इहलौकिक तथा पारलौकिक सुखों की प्राप्ति होती रही है तथा ये भविष्य में भी मानव मूल्यों के उत्थान में सहायक सिद्ध होंगे। प्रयाग तीर्थ केन्द्र पर दो प्रकार के तीर्थयात्री आते हैं। इनमें प्रथम वे तीर्थयात्री हैं जो एक समय विशेष पर जैसे माघ में लगने वाले कुम्भ मेले में आकर विभिन्न पर्वों पर स्नान, दान एवं धार्मिक क्रियाओं को करते हैं तथा दूसरे वे तीर्थयात्री हैं जो वर्ष भर यहाँ आते रहते हैं। इन तीर्थ यात्रियों में आस-पास के क्षेत्रों से आने वाले तीर्थयात्री और देश के दूर क्षेत्रों, प्रदेशों से आने वाले तीर्थयात्री हैं। वर्ष भर आने वाले तीर्थयात्रियों की जो विभिन्न प्रांतों से आते हैं, उनकी भिन्न-भिन्न धार्मिक रीतियाँ एवं क्रियाएं होती हैं। इनमें मध्य प्रदेश क्षेत्र से आने वाले तीर्थयात्री मुख्यतः अस्थि-विसर्जन एवं मुण्डन संस्कार के लिए आते हैं। इसी प्रकार दक्षिण भारत केरल, तमिलनाडु, कर्नाटक, आन्ध्र प्रदेश, महाराष्ट्र, गुजरात एवं राजस्थान आदि के तीर्थ यात्री वेणी-दान, श्राद्ध एवं शुद्धि कर्म के लिए यहाँ आते हैं।

प्रयाग का दारागंज में देश के प्रत्येक कोने से आने वाले तीर्थयात्रियों के पण्डे स्थित हैं। इन पण्डों, धर्म पुजारियों के पास एक बृहद् धर्मशाला एवं आवास है जो विविध सेवाओं से युक्त है। प्रत्येक क्षेत्र से आने वाले तीर्थ-यात्रियों के लिए अलग-अलग पण्डे हैं जो उस क्षेत्र की भाषा बोलते हैं। उनके रहन-सहन, तौर-तरीकों व धार्मिक क्रियाओं से पूर्ण परिचित होते हैं। प्रत्येक पण्डे के पास अपने-अपने क्षेत्र के आने वाले तीर्थयात्रियों के नाम का बहीखाता है। प्रयाग में अपने देश से आने वाले तीर्थयात्रियों के पण्डों के साथ ही कुछ ऐसे पण्डे हैं जो अंग्रेजी भाषा की जानकारी रखते हैं और विदेशियों को विभिन्न धार्मिक स्थलों का भ्रमण के साथ ही उनके धार्मिक क्रियाकलापों को भी सम्पादित कराते हैं।

कुम्भ मेला का ऐतिहासिक उद्‌भव

प्रयाग में कुम्भ मेले का इतिहास कब से शुरू होता है, इसकी गणना कर पाना अत्यन्त कठिन है, परन्तु यह निश्चित है कि सित और असित यानी गंगा और यमुना नदियों के पावन संगम के साथ ही यहाँ स्नान करने का पर्व शुरू हो गया था जो कालान्तर में श्रद्धा और विश्वास के साथ एक विशाल मेले का स्वरूप लेता गया। कुम्भ मेले के ऐतिहासिक उद्भव का विश्लेषण दो आधारों पर किया गया है। प्रथम पौराणिक एवं हिन्दू धर्म ग्रन्थों में वर्णित तथ्यों के आधार पर, द्वितीय विदेशी यात्रियों एवं इतिहासकारों द्वारा वर्णित तथ्यों पर आधारित। स्कन्दपुराण, गरुण पुराण में कुम्भ पर्व का उल्लेख मिलता है। इसके अनुसार देवताओं और दैत्यों के बीच जब समुद्र मंथन हुआ तो चौदह रत्न निकले। इनमें लक्ष्मी, कौस्तुभमणि, कल्पवृक्ष, बारूणी, धनवंतरि, चन्द्रमा, कामधेनु, ऐरावत, रंभादिक अप्सरायें, उच्चैश्रवा अश्व, कालकूट विष, शारंगधर, पांचशंख और अमृत। अमृत सबसे अन्तिम रत्न था। वह अमृत एक कुम्भ यानी घड़े में था, जिसे देवताओं के इशारे पर चतुराई से जयंत ने चुरा लिया। किन्तु असुरों के गुरू शुक्राचार्य ने वह अमृत कुम्भ देख लिया। उसे पाने के लिए आकाश में देवासुर संग्राम आरंभ हो गया। उसी संघर्ष के दौरान कुम्भ से अमृत की कुछ बूँदे छलक कर चार स्थानों प्रयाग (इलाहाबाद), हरिद्वार, उज्जैन और नासिक में गिरी और उन्हीं स्थानों पर कुम्भ पर्व होने लगा। वह अमृत जिन-जिन तिथियों और काल में उक्त स्थानों पर छलका, उन्हीं तिथियों और काल में कुम्भ का पुण्य काल माना जाता है। अवधारणा यह है कि जिन पवित्र नदियों के तट पर अमृत बूँदे गिरीं उनमें उसी समय स्नान करने से अमृत का पुण्य फल मिलता है (स्कन्द पुराण), (गरुण पुराण)।

कुम्भ मेले का दार्शनिक पक्ष

इस मेले का दार्शनिक पक्ष कथानक पक्ष से ज्यादा महत्त्वपूर्ण है। मनुष्य में जब शाश्वत जिजीविषा की अवधारणा ने जन्म लिया तभी ''मृत्योर्मा अमृतंगमय'' का बीज मन्त्र से प्रस्फुटित हुआ। यानी मनुष्य मृत्यु की ओर नहीं अमरत्व की ओर चले और अमरता की प्राप्ति के लिए ही अमृत की तलाश शुरू हुई। अमृत से प्राणिमात्र को अदम्य जिजीविषा के सम्मान का भाव बोध होता है। अदम्य जिजीविषा का सम्मान तभी रह सकता है जब समुद्र रूपी वैचारिक मंथन से ज्ञान रूपी अमृत कुम्भ निकले। प्रयाग में संगम तट पर लगने वाला कुम्भ मेला संतों, मनीषियों और विद्वज्जनों के परस्पर विचार मंथन का स्थल होता है।